# CHAPTER 21

# HINDI

## Doctoral Theses

169. अंजु रानी

**रीतिकालीन काव्य की आलोचना का अध्ययन।**

निर्देशिका : डॉ. विनीता कुमारी

Th 14791

*सारांश*

रीतिकालीन काव्य की आलोचना के वर्गीकरण से एक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह सामने आया कि यहाँ अधिकांश कार्य उपाधि हेतु ही किए गए हैं । मौलिक रूप से आलोचनात्मक कार्य बहुत कम दृष्टिगत होते हैं । कतिपय कवियों जैसे - घनानन्द, बोधा, केशव, भूषण, बिहारी आदि के स्वतंत्र अध्ययन को छोड़कर अल्प कार्य ही मौलिक चिन्तन का परिणाम है । इसके विपरीत उपाधि हेतु किए गए कार्यो में भी कतिपय विषय ऐसे हैं जिन पर स्वतंत्र चिन्तन की भी अपार संभावनाएं विद्यमान हैं । स्पष्टतः कहा जा सकता है कि रीतिकालीन काव्य की हुई विभिन्न आलोचनाओं से पाठक जगत में फैली रीतिका विषयक विविध भ्रान्तियों को विराम मिल सकता है। काव्यशास्त्र के विषय में जो अधकचरा ज्ञान फैला हुआ है, उसका सम्यक् निवारण हो सकता है । मुगलकानीन इतिहास से रीतिकालीन साहित्य के भीतर से प्राप्त ऐतिहासिक तथ्यों को मिलाकर युगीन साहित्य की प्रवृति और उसके स्वरूप को जाना जा सकता है, और रीतिकाल की सही तस्वीर को समझा जा सकता है । इन आलोचनाओं में जो नवीन-चिन्तन एवं उद्भावनाएँ प्राप्त हुई हैं, उनसे इस काव्य के गूढ़ रहस्यों का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है । निष्कर्षतः रीतिकालीन काव्य में गंभीर विषयों का चित्रण हुआ है । वह युगीन परिवेश के अनुसार सरस, सुबोध एवं सुकण्ट्य भाषा में रचित काव्य है । यहाँ कवियों ने व्यक्तिगत द्वेष एवं संकुचित मानसिकता से ऊपर उठकर सृजन किया है । आश्रयदाताओं के प्रशस्तिगान में भी इन्होंने उन महान बातों का सिंचन किया है, जो मानव-जीवन के लिए आवश्यक है । अतः इस काव्य को हिन्दी साहित्य की एक अमूल्य धरोहर के रूप में देखना

चाहिए । उसे साहित्य सारणी से काटकर देखना रीतिकालीन काव्य और हिन्दी साहित्य दोनो के प्रति अन्याय होगा ।

*विषय सूची*

1. आलोचना और साहित्य -अन्तः सम्बन्ध 2. रीतिकालीन काव्य की आलोचना का वर्गीकरण 3.रीतिकालीन काव्य के प्रति आलोचनात्मक दृष्टियाँ 4.रीतिकालीन निरूपण-काव्य सम्बन्धी आलोचना का अध्ययन 5. रीतिकालीन शृंगारपरक काव्य की आलोचना का अययन 6. रीतिकालीन वीरकाव्य की आलोचना का अध्ययन 7. रीतिकालीन भक्तिकाव्य की आलोचना का अध्ययन 8.रीतिकालीन नीतिकाव्य की आलोचना का अध्ययन 9. रीतिकाल विषयक अन्य आलोचना दृष्टियों का अध्ययन। निष्कर्ष । उपसंहार । ग्रंन्थ सूची ।

170. अग्रवाल (प्रीति)

**स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी उपन्यासों में मूल्य-बोध ।**

निर्देशक : डॉ. सुरेन्द्रनाथ सिहं

Th 14785

*सारांश*

मूल्य स्वेच्छा से जीवन पद्धति का अंग बनाई गई वो धारणाएँ हैं जो एक तरफ व्यक्ति को नैतिक बल प्रदान करती है वही दूसरी ओर अनैतिक और अशुभ से बचाकर स्वस्थ मानवीय आचरण की प्रेरणा भी देती है । मूल्य ही हमारे सामाजिक, नैतिक जीवन की आधारशिला है, जो हमारे सामाजिक व्यवहारों को मर्यादित करते है । मूल्यों के माध्यम से मानव की इच्छाओं की सन्तुष्टि होती है । मानवीय इच्छाएं परिस्थितियों के अनुसार बदलती रहती है । तद्नुसार मूल्यों का स्वरूप भी बदलता रहता है । कुछ मूल्य व्यक्ति को विरासत में मिलते हैं और कुछ युग की मांग के अनुरूप अर्जित किए जाते हैं । मूल्यों की दृष्टि से स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में बहुमुखी विकास दृष्टिगोचर होता है । स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में जहां एक ओर व्यक्ति के भावों और विचारों को सूक्ष्मातिसूक्ष्म रूप में अभिव्यक्त किया गया है वहीं दूसरी ओर परम्परागत मान्यताओं का पूनर्परिचण करते हुए नवीन मान्यताओं और मूल्यों की स्थापना में भी आस्था को प्रकट किया गया है ।

*विषय सूची*

1. (क) मूल्य : अभिप्राय एवं स्वरूप (ख) मूल्य और विभिन्न घटक : परस्परिक सम्बन्ध (ग) मूल्यों का वर्गीकरण एवं प्रकार 2. हिन्दी मूल्याभिव्यक्ति की परम्परा और विकास 3. स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास : प्रेरक परिस्थितियां एवं परिवेश 4. स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास : सामाजिक मूल्यों के परिपेक्ष्य में 5. स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास और राजनीतिक मूल्य 6. स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास और आर्थिक मूल्य 7. स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास : सांस्कृतिक मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में । उपसंहार । ग्रंन्थ सूची ।

171. उमा देवी

**अपराधीकरण और अंतिम दशक के हिन्दी उपन्यास ।**

निर्देशक : डॉ. प्रेम सिंह

Th 14795

*सारांश*

अपराधीकरण का चित्रण उपन्यासों में उसके आरम्भ काल से ही होता आया है। प्रेमचन्द पूर्व, प्रेमचन्द युगीन और प्रमचन्दोत्तर उपन्यासों में तत्कालीन परिस्थितियों के अनुरूप अपराधीकरण का चित्रण किया गया है । हालांकि प्रमेचन्द पूर्व के उपन्यासें में आदर्शों का चित्रण ज्यादा है, यथार्थ उतना नहीं उभर सका है । फिर भी इस युग के उपन्यासों में अपराधीकरण और उसके लिए जिम्मेदार सामाजिक-राजनीतिक-आर्थिक परिस्थितियों का कुछ चित्रण हुआ है । औपनिवेशिक शासकों के कोप से बचने के लिए चन्द्रकान्ता और भूतनाथ जैसे उपन्यासों में फैंटेसी के रूप में सामाजिक वास्तविकता का चित्रण किया गया । अंतिम दशक के उपन्यासों में समाज में होने वाले अपराधीकरण का बहुत की सूक्ष्म चित्रण किया गया है । समाज के प्रत्येक क्षेत्र, जाति-धर्म, राजनीति, पुलिस, नौकरशाही, न्यायपालिका, विश्व-विद्यालय, मीडिया में अपराध और अपराधीकरण, का उनकी परिस्थितियों, कारणों सहित विविध रूपों में चित्रण किया गया है । नवें दशक के उपन्यास इस सच्चाई की गवाही देते हैं कि भारतीय समाज में विशेषकर वंचित तबकों के प्रति अपराधों में बढोतरी और तेजी आई है । उपन्यासकारों ने इस परिघटना का गंभीर

विश्लेषण भी रचनात्मक अनुशासन में किया है । साथ ही उन वैकल्पिक विचारों और आन्दोलनों की ओर भी इशारा किया है जो इस परिघटना का मुकाबला कर रहे है।

*विषय सूची*

1. अपराध का अर्थ, महत्त्व एवं परिभाषाएं 2. भारतीय समाज में अपराधीकरण का हिन्दी उपन्यासों पर प्रभाव 3. 1990 के बाद हिन्दी उपन्यास का स्वरूप एवं स्थिति 4. 1990 के बाद के हिन्दी उपन्यासों में अपराधीकरण 5. उपसंहार । ग्रंन्थ सूची ।

172. कुसुम लता

**हिन्दी नाटकों के मिथकीय पात्रों की प्रासंगिकता**

निर्देशक : डॉ. रमेश गौतम

Th 14797

*सारांश*

मिथक और साहित्य का गहरा संबंध रहा है । जिस प्रकार मिथक मानव-मन की विभिन्न परतो ंको उघाडतें हैं, ठीक उसी तरह साहित्य भी जीवन के विभिन्न रूपों को अभिव्यक्त करता है । साहित्य द्वारा युग-युग की समस्याओं का समाधान किया जाता है और इसके लिए साहित्यकार अतीत के पन्नों में खोकर मिथक-संसार में डुबकी लगााता है । हिन्दी नाट्य-जगत में हमारी संस्कृति से जुडे प्रायः सभी मिथको को लेकर नाट्य-रचनाएं हुई हैं । ये मिथक अपने युग-सत्य को अभिव्यक्त करते हुए अतीत और वर्तमान के बीच संबंध स्थापित करते है । नाट्यकारों ने प्रभावशाली ढंग से मिथक को साहित्य में प्रयुक्त किया है । मिथक समय-समय पर साहित्य को नए आयामों से विभूषित करते रहे है । अमूर्त सूक्ष्म भावों को व्यक्त करने के लिए मिथक विम्ब का कार्य करते हैं और नैतिकता को मानवीय मूल्यों से ओत-प्रोत करते है । आज का युग भय, संत्रास ओर निराशा का युग है। ऐसे में मिथकीय नाट्य मात्र संदेश देते हैं कि शांति संस्कृति का विकास करती है और युद्ध विनाश। मिथकीय पात्रों की प्रासंगिकता यही है कि ये जीवन के हर क्षेत्र में शिक्षा देने का कार्य करते हैं मिथकीय पात्रों और उनके द्वारा किए गए कार्यों में प्रत्येक युग के सत्य को

उद्‌घाटित करने की क्षमता होती है । जनमानस में गहराई से अपनी छाप छोडने वाले मिथकीय पात्र सदियों से लोगो को प्रेरित करते आ रहे है ।

*विषय सूची*

1. मिथक एवं पात्र : अर्थ और अवधारणा 2. नाट्य साहित्य में मिथकीय पात्रों का इतिहास और परंपरा 3. भरतेंदुयुगीन हिन्दी नाटकों के मिथकीय पात्र और उनकी प्रासंगिकता 4. प्रसादयुगीन हिन्दी नाटकों के मिथकिय पात्र और उनकी प्रासंगिकता 5. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटकों के मिथकीय पात्र और उनकी प्रासंगिकता। उपसंहार । ग्रंन्थ सूची ।

173. गुप्ता (अलका)

**गिरिजाकुमार माथुर के काव्य का शिल्प-विधान ।**

निर्देशिका : डॉ. उमा पाठक

Th 14789

*सारांश*

गिरिजाकुमार माथुर अपनी रोमानी संवेदना, सामाजिक यथार्थ, युगीन परिप्रेक्ष्य में मानव की परिस्थितियों के सही मूल्यांकन तथा नवीन वैज्ञानिक चेतना की सरस एवं सरल अभिव्यक्ति के साथ तकनीक के क्षेत्र में किए गए क्रांतिकारी परिवर्तनों के कारण नयी कविता के एक महत्त्वपूर्ण रचनाकार हैं । आधुनिक हिन्दी कविता के इतिहास में नयी कविता का उदय एक महत्त्वपूर्ण घटना है जिसने हिन्दी कविता की पारंपरकि प्रकृति में विशिष्ट परिवर्तन किए । आधुनिक भाव-बोध से संपृक्त नयी कविता के उदय की प्रेरणा नई जीवन-स्थितियों में निहित थी । छायावाद की कथ्य-चेतना एवं शिल्प-विधान में जीवन की बदलती परिस्थितियों की अभिव्यक्ति संभव नहीं रह गई थी । साथ ही, छायावाद की प्रतिक्रिया में जन्मा प्रगतिवादी काव्य विचारधारात्मक जकड़न का शिकार हाने लगा था । अतः जीवन के व्यापक एवं जटिल यथार्थ को उसमें समेट पाना प्रायः संभव नहीं था । इन स्थितियों का सामना करता हुआ रचनाशील मानस अभिव्यक्ति की नयी प्रणालियों और नयी राहों की तलाश में था । इस तलाश का महत्त्वपूर्ण प्रयास अज्ञेय के संपादकत्व में प्रकाशित

'तारासप्तक' (1943) था । तारासप्तक ने काव्य-धाराणा एवं रचना में परिवर्तन का सूत्रपात किया । यह प्रयास दूसरा सप्तक (1951) और तीसरा सप्तक (1959) के प्रकाशन में भी जारी रहा । सप्तकों की इस परंपरा में संकलित कवि नयी कविता के आधार स्तंभ बने । उन्होंने कविता के परम्परागत ढ़ांचे को तोड़कर सृजन के नए प्रतिमानों एवं आस्वाद के नए धरातलों की सृष्टि का प्रयास किया । इस प्रयत्न में काव्य के शिल्प संबंधी अनेक महत्त्वपूर्ण बदलाव इन कवियों के काव्य एवं चिंतन दोनों में दिखाई पड़ते हैं । गिरिजाकुमार माथुर के काव्य के शिल्प-विधान में भी यह परिवर्तन -बदलाव कई धरातलों पर दृष्टिगत होते है । गिरिजाकुमार माथुर की कवतािओं का सजीव भाषा संस्कार और लहजा हिन्दी कविता के स्तर कों ऊँचा उठाता है । वे कथ्य संवेदन के अनुसार बिम्ब, उपमान, प्रतीक, लय, छंद आदि का प्रयोग करते हैं । इसलिए उनका शिल्प-विधान कथ्य-संवेदन को ऊर्जा युक्त बनाता है ं वे जनाभावों की विचार-संपदा में हिन्दी कविता को समृद्ध बनाने वाले मौलिक कवि है । देश-विदेश के सम्मानों से अलंकृत गिरिजाकुमार माथुर ने समय समाज और राजनीति की चिंताओं को निर्भय भाव से अभिव्यक्ति दी है। भाव-विम्ब-लय-ताल-छंद-नाद से संयुक्त होकर माथुर जी की काव्य संवेदना सही मायनों में क्लासिकल बन गई है ।

*विषय सूची*

1. शिल्प की अवधारणा और उसके उपादान 2. गिरिजाकुमार माथुर : साहित्यिक संवेदना का विकास एवं चिन्तन 3. माथुर की काव्य भाषा 4. माथुर के काव्य में अप्रस्तुत-योजना 5. माथुर के काव्य में बिम्ब विधान 6. माथुर के काव्य में प्रतीक-विधान 7. काव्य-रूप और माथुर का काव्य 8. माथुर के काव्य में छंद-योजना । उपसंहार । ग्रंन्थ सूची ।

174. गुप्ता (अलका)
**सोमनाथ के काव्य में लोक-संस्कृति ।**
निर्देशिका : डॉ. स्नेह चड्ढा
Th 14496

## *सारांश*

लोक संस्कृति शब्द लोक तथा संस्कृति दो शब्दों के योग से निर्मित हुआ है । अंग्रेजी में 'लोक' के लिए 'फोक' तथा 'संस्कृति' के लिए 'कल्वर' शब्द प्रसिद्ध है । लोक मानव समाज की सामूहिक इकाई है, जो अपने नैसर्गिक एवं स्वाभाविक रूप में आभिजात्य बंधनों एवं परम्पराओं से रहित होते हैं तथा शास्त्रीयता, पंडित एवं चमत्कार से दूर पृथक एवं स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करते है । लोक का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। जीवन के प्रत्येक पक्ष के दर्शन 'लोक तत्त्वों' के अन्तगर्त परिलक्षित होते है । सोमनाथ ने अपने काव्य में अभिव्यक्ति के लिए जिस भाषा को अपनाया है वह लोक प्रचलित ब्रजभाषा है किन्तु उसे शुद्ध ब्रजभाषा नहीं कहा जा सकता क्योंकि उसमें ब्रजभाषा के अतिरिक्त संस्कृत के तत्सम-तदभव, देशज, अरबी-फारसी, राजस्थानी-पंजाबी शब्द भी सम्मिलित है। कवि ने शब्द शक्ति के तीनों प्रकार-अभिधा, लक्षणा, व्यंजना का प्रयोग सर्वत्र किया है किन्तु अभिधा शक्ति का प्रयोग अधिक है । भावों को सशक्त बनाने के लिए कवि ने ओज, प्रसाद तथा माधुर्य गुणों को प्रयुक्त किया है । अलंकार काव्य के शोभा विधायक तत्त्व है जिनसे काव्य में कांति आती है । लेकिन इनका अतिशय प्रयोग काव्य की शोभा को फीका कर देता है । अतः अलंकार का संतुलित स्वाभाविक प्रयोग ही सौन्दर्य की सृष्टि करता है । मनोवैज्ञानिक आधार पर अलंकारों को साम्य, वैषम्य, अतिशय, चमत्कार, वक्रता और औचित्य मूलक के रूप में वर्गीकृत किया गया है । सोमनाथ ने मुख्यतः लोक में प्रचलित दोहा, कुण्डलिया, चौपाई और छप्पय छंदों का प्रयोग किया है । कवि का उद्देश्य अपने काव्य को जन-जन तक पहुँचाना था अतः उन्होंने लोक भाषा के लोक छन्दों को अपनाकर ही अपनी अभिव्यक्ति की है । वे किसी चमत्कार में नहीं उलझें है । यही कारण है कि कठिन विषयों का वर्णन करते हुए कवि ने उनके साथ गघ की सरल टीका भी प्रस्तुत कर दी है ।

## *विषय सूची*

1. लोक-संस्कृति : अभिप्राय एवं स्वरूप 2. सोमनाथ व्यक्तित्व एवं कृतित्व 3. सोमनाथ के काव्य में धार्मिक एवं दार्शनिक जीवन 4. सोमनाथ के काव्य में सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन 5. सोमनाथ के काव्य में राजनीतिक जीवन 6. सोमनाथ की काव्य भाषा में लोक-संस्कृति व्यंजक भाषा । उपसंहार । ग्रंन्थ सूची।

175. गुरू चरण

**अमृतलाल नागर के उपन्यासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन ।**

निर्देशक : डॉ. सुरेश धीगड़ा

Th 14778

*सारांश*

अमृतलाल नागर के उपन्यास पाठक को भारतीय समाज की जटिल गुत्थियों की ओर आकृष्ट करते है । अपनी सांस्कृतिक-धार्मिक संपदाओं, परंपराओं, दर्शन, मान्यताओं, अवधारणाओं, संरचनात्मक सूक्ष्मताओं, आधुनिकता की ओर प्रयाण की बाधाओं और नए मनुष्य की तलााश के प्रयासों के कारण ये कृतियां अनेक अनुसंधानों का विषय बनी हैं । उनके परिवश की व्यापकता, इतिहास-दृष्टि व समाज-दृष्टि बहुत परिपिक्व है । उनके उपन्यासों में समाज की दुर्बलताएँ उजागर होती है तो दूसरी ओर संगठित करने वाल तत्त्वों का विस्तृत वर्णन मिलता है । उनके उपन्यासों में जहाँ एक ओर प्रतिस्पर्धात्मक सहयोग की भावना है तेा दूसरी ओर अधीनता, श्रम विभाजन जैसे पक्षों पर तीखाी टिप्पणियाँ है; एक ओर समाजशास्त्र की मूलभूत इकाइयों का परिचय मिलता है तो दूसरी ओर सामाजिक व्यवस्था का चित्रण मिलता है ।

*विषय सूची*

1. व्यक्तित्व एवं कृतित्व 2. समाजशास्त्रीय अध्ययन : सामान्य परिचय 3. उपन्यास और युगीन परिवेश 4. नागर जी के उपन्यासों में चित्रित समाज 5. अमृतलाल नागर के उपन्यास : नारी के संदर्भ में 6. अमृतलाल नागर के उपन्यास : पुरूष के संदर्भ में 7. अमृतलाला नागर के उपन्यास : आर्थिक संदर्भ 8. अमृतलाल नागर के उपन्यास - राजनीतिक संदर्भ 9. अमृतलाल नागर के उपन्यास : धार्मिक संदर्भ 10. अमृतलाल नागर के उपन्यास : सांस्कृतिक संदर्भ। उपसंहार । परिशिष्ट । ग्रंन्थ सूची ।

176. गुरूमीत कौर

**जैनेंद्र के उपन्यास साहित्य में युगबोध ।**

निर्देशिका : डॉ. नीलिमा राय चौधुरी

Th 14790

*सारांश*

जैनेंद्र का युगबोध उनके संश्लिष्ट दार्शनिक व्यक्तित्व की प्रतिछवि है । जैनेंद्र कर्म को तात्कालिक, चेतना को कालातीत तथा नैतिकता को सार्वकालिक मानते है । संक्रांतिकालीन राजनीतिक सक्रियता को त्यागकर उनका दर्शन साहित्य के रूप में अविर्भूत हुआ । पश्चिम की भौतिक जीवन दृष्टि ने परंपरागत भारतीय जीवन में व्यापक अंतर्विरोध उप्पन्न कर दिये । जीवन के सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक सभी स्थापित मूल्यों पर प्रश्न चिह्न अंकित हो गये । विज्ञान तथा पश्चिमी शिक्षा ने धर्म तथा नारी भूमिका में युगांतकारी परिवर्तन प्रस्तावित किये । अभी भारतीय अपनी परंपरागत आध्यात्मिकता को भी थामे थे और नई पश्चिमी भौतिकता अनायास ही उनके जीवन में प्रविष्ट हो गई । जीवन के सभी आयामों में व्यापक द्वंद्व, अंतर्विरोध तथा किंकर्तव्यविमूढ़ता प्रविष्ट हो गई । जैनेंद्र इस जटिल परिस्थिति में भी उपन्यासों के माध्यम से अंतरंगता की प्राप्ति, विग्रह की शांति तथा व्यक्तित्व की समग्रता की प्राप्ति के रूप में अपने युगबोध को साकर करते है किंतु उनकी आत्मा सत्योन्मुखी तथा सार्वकालिक है । वे बौद्धिकतापूर्वक अपने पात्रों की त्रासदी का साक्षात्कार भले ही युगीन संदर्भों में करते हैं किंतु उनका सामाधान दार्शनिक तथा हार्दिक ही प्रस्तुत करते है । उनका युगबोध प्रेमपूर्वक 'स्व' को खोकर निर्द्वंद्व समग्र की अनुभूति पाने की प्रक्रिया है जिसे जैनेंद्र 'वैज्ञानिक-आध्यात्म' का दार्शनिक आधार प्रदान करनते हैं । जैनेंद्र का युगबोध व्यक्तित्व, पारिवारिक सामाजिक, राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय सक्रियता की योजना प्रस्तुत करता है ।

*विषय सूची*

1. युगबोध का स्वरूप 2. जैनेंद्र का युगबोध : परिवेश तथा आधुनिक चिंतन 3. जैनेंद्र का युग और उनके उपन्यास 4. जैनेंद्र का युगबोध और नारी 5. जैनेंद्र का युगबोध : प्रेम और विवाह 6. जैनेंद्र का युगबोध और परिवार 7. जैनेंद्र का युगबोध और राजनीतिक चेतना । 8. जैनेंद्र का युगबोध और आर्थिक चेतना । उपसंहार । ग्रंन्थ सूची ।

177. जयसिंघानी (नीतू)
**स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी एकांकी नाटकों में जीवन-मूल्य ।**
निर्देशक : डॉ. एस. नारायण अय्यर
Th 14777

*सारांश*

प्रस्तुत शोध विषय समाज और संस्कृति के व्यापक तुलनात्मक अध्ययन की अपेक्षा करता है । समाज और संस्कृति से जीवन-मूल्य निर्मित होते हैं। वही जीवन-मूल्य परस्पर इनका निर्माण भी करते है । इसलिए इनके बीच अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। ये परस्पर एक-दूसरे के पूरक हैं । इसीलिए शोध अध्ययन के दौरान उपर्युक्त बिन्दुओं पर विशेष ध्यान केन्द्रित किया गया है । हिन्दी एकांकी नाटक, नाटक विद्या का ही अंग है । इसमें नाटक विद्या के सभी तत्व मौजूद हैं । वर्तमान आधुनिक, वैज्ञानिक युग में जहां समयाभाव एक प्रमुख समस्या के रूप में उभर कर आया है । एंकाकी नाटक, नाटक की सम्पूर्ण विशेषताओ को अपने में समाहित करते हुए भी उक्त समस्या (समयाभाव) के निदान में समर्थ है । यही इसकी लोकप्रियता का सबसे प्रमुख कारण है । स्वातन्त्रयोत्तर जीवन-मूल्यों की पड़ताल के संदर्भ में हिन्दी-एकांकी नाटकों के चयन का प्रमुख आधार यही था ।

*विषय सूची*

1. एकांकी नाटक का स्वरूप 2. जीवन-मूल्यों की अवधारणा 3. स्वातन्त्र्योत्तर परिवेश और मूल्य-बोध 4. स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी एकांकी नाटकों में राजनैतिक मूल्य 5. स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी एकांकी नाटकों में सामाजिक ओर आर्थिक मूल्य। उपसंहार । परिशिष्ट ।

178. त्यागी (संजय कुमार)
**निर्मल वर्मा के साहित्य में अस्तित्ववादी दर्शन ।**
निर्देशक : डॉ. द्वारिका प्रसाद एवं चारूमित्र
Th 14793

*सारांश*

निर्मल वर्मा के समस्त साहित्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि उन पर अस्तित्ववादी दर्शन का गहरा प्रभाव है । प्रारंभ में निर्मल जी मार्क्सवाद और कम्युनिस्ट पार्टी के संपर्क में रहें; पश्चिमी आधुनिकतावाद और अस्तित्ववादी-व्यक्तिवादी दर्शनों के प्रभाव में बाद में आए । उनके चिंतन और कथा-साहित्य में इतिहास और आधुनिक संकट-बोध का दबाव निरंतर महसूस किया जा सकता है । अपने ऊपर अस्तित्ववाद के प्रभाव को निर्मल जी अस्वीकार नहीं करते । वह स्वीकार करते हैं कि ''अस्तित्ववादी दर्शन से जो मैंने सबसे बहुमूल्य चीज़ अपने लिए पाई

वह यह कि ईश्वर और इतिहास से मुक्त होकर यह आदमी पर निर्भर है कि वह अर्थ और नौतिकता को जन्म दे जिससे कि बाहरी दुनिया से एक अर्थपूर्ण संबंध बन सके । इस बात के बीज शायद मुझमें बहुत पहले भी रहे हों क्योंकि यह चीज़ इतनी आसानी से सरल ढंग से मैंने नहीं पाई । लेकिन कयोंकि मेंरी भूमिका मार्क्सवाद से शुरू हुई थी इसलिए बाद में अस्तित्ववाद के प्रति इतने गहरे स्तर पर आकर्षित होना अपने विकास में मुझे एक अनिवार्य कदम जान पड़ा ''। निर्मल वर्मा के संपूर्ण साहित्य के अध्ययन-विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि उनकी कलादृष्टि और रचनाशीलता पर अस्तित्ववादी दर्शन का अत्यंत गहरा प्रभाव परिलक्षित होता है । हिंदी कथा-साहित्य में वह अपनी एक अलग पहचान बनाते हैं । ईश्वर-विहीन संसार में वह मानव-अस्तित्व की निरर्थकता, निराशा और अकेलेपन की भयावह पीड़ा को उद्‌घाटित करते है । उनमें विसंगत संसार में सच्ची अस्मिता और मानवीय अर्थवत्ता की खोज की व्याकुलता है । अपने सृजनात्मक लेखन के 'कव्वे ओर काला पानी' कहानी और 'अंतिम अरण्य' उपन्यास में वह अस्तित्ववादी अकेलेपन के दर्शन को भारतीय संन्यासवाद और हिंदू धर्म से सामंजस्य बिठाने की कोशिश करते है । लेकिन उसमें दरारे हैं क्योंकि ईश्वर के अस्तित्व अथवा मरणोपरांत जीवन में उनका विश्वास है, इसकी पुष्टि उनकी रचनाएँ नहीं करतीं, हाँ धार्मिक-बोध की माँग अवश्य करती हैं । अस्तित्व के समक्ष अनस्तित्व का विकट प्रश्न बना ही रहता है । निर्मल उन अस्तित्ववादी विचारकों की विडंबना को उद्‌घाटित करते हैं जो नास्तिकता-आस्तिकता के बीच मध्यम मार्ग अपनाते हैं । निर्मल वर्मा के यहाँ अस्तित्ववाद किसी फैशन के तौर पर नहीं आया है, वह उनके गहरे अध्ययन-मनन, भाव-विचार, संस्कार और जीवनानुभवों से उपजा है । वह अपने कला-विवेक और सृजन के प्रति बहुत ईमानदार हैं - अनुभवों के प्रति बेहद सच्चे और खरे । अनुभव के अनुरूप शब्द-चयन, कथा-शिल्प और काव्यात्मक गद्य के निर्माण में अत्यंत कुशल ।

*विषय सूची*

1. (खण्ड 1) अस्तित्ववादी दर्शन : सैद्धांतिक विवेचन (खण्ड 2) अस्तित्ववादी अवधारणाएँ एवं अस्तित्वगत अनुभूतियाँ 2. निर्मल वर्मा : जीवन, व्यक्तित्व एवं साहित्य 3. निर्मल वर्मा का निबंध साहित्य और अस्तित्ववाद 4. निर्मल वर्मा का कहानी साहित्य और अस्तित्ववाद 5. निर्मल वर्मा का उपन्यास साहित्य और अस्तित्ववाद । उपसंहार । परिशिष्ट । ग्रंथसूची ।

179. नीरू

**मध्ययुगीन सामंतीय मूल्य-व्यवस्था और रीतिकालीन वीरकाव्य ।**

निर्देशक : डॉ. पूरनचन्द टण्डन

Th 14787

*सारांश*

सामंतवाद शब्द का प्रयोग ऐंतिहासिक विकास की भिन्न-भिन्न अवस्थाओं के संदर्भ में किया जाता है । ये अवस्थाएँ देश-काल की दृष्टि से एक दूसरे से काफी दूर पड़ती हैं । आमतौर पर, पाँचवीं शताब्दी से पंद्रहवीं शताब्दी तक के यूरोपीय समाज को ही सांमतवादी समाज कहा जाता है । वीरकाव्य अपने युग की संघर्षपूर्ण परिस्थितियों की देन होता है और यह संघर्ष राजनीतिक, सामाजिक या धार्मिक किसी भी प्रकार का हो सकता है । रीतिकालीन वीरकाव्य भी अपने युगीन संघर्ष की उपज है । औरंगजेब की धार्मिक कट्टरता और उसके अत्याचारों से निरीह जनता की रक्षा करने तथा सम्मान दिलाने के लिए जब शिवानी, छत्रसाल, गुरू गोविन्द सिंह और सूरजमल जैसे युगनायकों और वीर पुरूषों ने तलवार उठाई तो कवियों ने भी अपनी ओजस्वी वाणी के माध्यम से इस संघर्ष में जिस प्रकार से साथ दिया, उसका सजीव चित्र उनके काव्यों में अंकित है । रीतिकालीन वीरकाव्यों में जितनी कुशलता के साथ युद्ध आदि का चित्रण हुआ है, उससे इनके रचयिताओं की अभिव्यंजना-क्षमता का परिचय मिलता है ।

*विषय सूची*

1. मध्ययुगीन सामंतवाद : आवधारणा, स्वरूप एवं महत्त्व 2. वीरकाव्य : स्वरूप विवेचन 3. वीरकाव्य की रचनायात्रा ओर रीतिकालीन वीरकाव्य 4. वीरकाव्य में सामंतीय राजनीतिक व्यवस्था 5. वीरकाव्य में सामंतीय आर्थिक व्यवस्था 6. वीरकाव्य में सामंतीय सामाजिक व्यवस्था 7. रीतिकालीन सामंतीय मूल्य-व्यवस्था को व्यञ्जित करने वाली भाषा । उपसंहार । संदर्भ ग्रंन्थ सूची ।

180. भास्कर लाल कर्ण

**भारतेंन्दुयुगीन साहित्य में मध्यकालीनता और आधुनिकता का द्वन्द्व ।**

निर्देशक : डॉ. हरिमोहन शर्मा

Th 14794

*सारांश*

भारतेंदुयूगीन साहित्य को तत्त्कालीन नवजागरण की राष्ट्रीय धारा से कटा हुआ सिद्ध करने की जो कवायद आजकल चल रही है, वह निराधार और दूषित आग्रह से युक्त है । निम्नवर्गीय प्रसंगों को आधार बनाकर इतिहास के भद्रवर्गीय आधार को जिस तरह समस्याग्रस्त बना, तदनन्तर ख़ारिज किया जा रहा है, वह ऐतिहासिक दृष्टि का नहीं इतिहासहन्ता उद्देश्य का परिचायक है । हिन्दी नवजागरण के साहित्यान्दोलन को केवल हिन्दी भाषा व गोरक्षा आंदोलन कहकर उसे मुस्लिम विरोधी वैचारिकी का पर्याय बनाते हुए न केवल कई तथ्यों की अनदेखी की गई है, बल्कि उसे ऐतिहासिक सन्दर्भों में व्याख्यायित न कर नवसाम्रज्यवादी ख़तरों की अनदेखी करनेवाले विमर्शों के हवाले से कुपाठ किया गया है । इस का परिणाम है कि भारतेन्दु या तो नायक होते हैं, या खलनायक । प्रतापनारायण मिश्र हिन्दी नवजागरण के लेखक होते हैं , या हिन्दू नवजागरण के धार्मिक पण्डित । सभी लेखकों को इसी तरह सीमाओं में परखा जाता है । ध्यान देने की बात है कि अतीत की सही समझ ही वर्तमान की चुनौतियों से दो-चार होने में हमारी मदद करती हैं, क्योंकि वर्तमान आख़िर अतीत का भविष्य होता है ।

*विषय सूची*

1. प्रत्यय की व्याख्या 2. भारतेन्दुयुग की ऐतिहासिक स्थिति 3. भारतेन्दुयुगीन साहित्यकारों की वैचारिक दृष्टि 4. संवेदनात्मक ढाँचे में मध्यकालीनता का द्वन्द्व 5. कला-प्रयोग में पारम्परिक ओर नवीन रूप-विधान । उपसंहार । ग्रंन्थ सूची।

181. मीना (ललिता)
**देव के काव्य में सौंदर्य चेतना ।**
निर्देशक : डॉ. सुधीर शर्मा
Th 14784

*सारांश*

देव के काव्य में सौंदर्य-चेतना में सौंदर्य का प्रदर्शन तथा वर्णन रीतिकाल की प्रमुख प्रवृति रही है । सौंदर्य के साथ अनुभूति का अटूट बंधन होता है ओर विवेचित काल के साहित्य में मधुरतम भावनाओं का विशद एवं मर्मस्पर्शी चित्रण किया गया है । देव का काव्य सौंदर्य की दृष्टि से अनुपम है । इनकी सौंदर्य चेतना विषय और व्यजंना के स्तरों पर नए-नए रूपों में उभरकर सामने आती है । इनका काव्यशास्त्र

और काव्य इनकी आन्तरिक सौंदर्य दृष्टि को प्रकाशित करने के उपकरण हैं । इनकी कल्पनात्मक चेतना का प्रधान धर्म सौंदर्य है जो उनकी रचना धर्मिता की मूल प्रेरणा है । भाक्ति भावना भी सौंदर्य-आश्रित है ।

*विषय सूची*

1. सौंदर्य एवं सौंदर्य चेतना : स्वरूप विवेचन 2. देव : जीवन-वृत्त, व्यक्तित्व एवं रचनाएँ 3. देव के काव्य में रूपगत सौंदर्य 4. प्रसाधनगत सौंदर्य 5. देव के काव्य में भाव-सौंदर्य 6. देव के काव्य में विचारगत सौंदर्य 7. देव के काव्य का अभिव्यंजनागत सौंदर्य । निष्कर्ष । उपसंहार । संदर्भ ग्रंन्थ सूची ।

182. यादव (बीर पाल सिंह)
**प्रगतिवादी साहित्य चिंतन और रामविलास शर्मा ।**
निर्देशक : डॉ. एस. एन. अय्यर
Th 14774

*सारांश*

प्रगतिवादी साहित्य चिंतन यूरोप में फासीवाद के उभार के विरूद्ध संघर्ष के दौरान पैदा हुआ था और भारत जैसे औपनिवेशिक देशों के लेखकों और कलाकारों ने इसे राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन से जोड़ दिया । इस आंदोलन के पीछे मार्क्सवादी विचारधारा की शक्ति और सोवियत संघ के निर्माण की ताकत भी लगी हुई थी । इसने साहित्य के उद्देश्य से लेकर वस्तु और रूप तक के सवालों पर नये तरह की सोच को सामने रखा, जो उस समय लेखकों और कलाकारों के बीच जीवंत बहस के मुद्दे बने । रामविलास शर्मा एक साथ साहित्य समीक्षक और संस्कृति समीक्षक हैं । उन्होंने जातीय समाज, जातीय भाषा और जातीय साहित्य के संबंध में एक साथ क्रान्तिकारी स्थापनाएं प्रस्तुत की हैं । उनकी आलोचना ने हिन्दी की प्रगतिशील ओर मार्क्सवादी आलोचना को जन्म दिया और निरंतर उसका विकास किया । पुरानी और नयी पीढी के प्रगतिशील आलोचकों से कई बिन्दुओं पर उनके मतभेद रहे पर अपने तर्कों और तथ्यों के सहारे वे सदैव अडिग अविचल रहे । मार्क्स के शब्दों का मंत्र जाप करने वाले मार्क्सवादियों ने रामविलास शर्मा को संशोधनवादी इसलिए कहा कि उन्होंने मार्क्सवाद की अनेक सैद्धान्तिक स्थापनाओं और मान्यताओं का खण्डन किया था । उन्होंने न तो पाश्चात्य आलोचकों के उद्धरण दिये और न भारतीय काव्य शास्त्र से मानक ग्रहण कियो ।

उनके समक्ष मार्क्सवादी सिद्धांत और दर्शन था ; पर साहित्यिक आलोचना में उन्होंने सदैव इसे कसौटी नहीं बनाया ।

*विषय सूची*

1. प्रगतिवादी साहित्य चिंतन की पृष्ठभूमि 2. मार्क्सवादी साहित्य चिंतन के आधार और रामविलास शर्मा 3. रामविलास शर्मा की साहित्यिक दृष्टि का विकास। 4. प्रगतिवादी साहित्य के विभिन्न विवाद 5. प्रगतिवादी साहित्य चिंतन में रामविलास शर्मा का योगदान । उपसंहार । परिशिष्ट । संदर्भ सूची ।

183. रजिन्द्र कौर

**आलम तथा द्विजदेव की काव्य-भाषा का तुलनात्मक अध्ययन ।**

निर्देशिका : डॉ. गीता शर्मा

Th 14788

*सारांश*

आलम तथा द्विजदेव की काव्य-भाषा का तुलनात्मक अध्ययन वर्णनात्मक भाषा विज्ञान की दृष्टि से प्रस्तुत किया गया है किंतु साथ ही इसमें काव्यशास्त्र तथा व्याकरण का पूरा योग समाहित है । तुलनात्मक अध्ययन ऐसी स्थिति में और भी अनिवार्य हो जाता है जब दोनों कवि एक ही युग तथा एक ही भाषा के प्रयोक्ता हो । आलम तथा द्विजदेव की भाषा अपना-अपना वैशिष्ट्य लिए हुए है । प्रस्तुत शोध प्रबंध में उनकी भाषा पर उनके विचारों और व्यक्तित्व की जो अनूठी छाप पड़ी है उसे उजागर करने के साथ-साथ दोनों कवियों के उन काव्य-स्थलों पर भी विचार किया गया है जहाँ वे ब्रजभाषा की समान भावभूमि पर खड़े दिखाई देते हैं। चूँकि आलम ने ब्रज के साथ-साथ अवधी तथा रेख्ता में भी काव्य रचना की इसलिए आलम द्वारा प्रयुक्त अवधी तथा रेख्ता के स्वरूप पर भी प्रकाश डाला गया है।

*विषय सूची*

1. तुलनात्मक अध्ययन : अभिप्राय, स्वरूप एवं उपादेयता 2. अभिप्राय, स्वरूप तथा वैशिष्ट्य 3. आलम तथा द्विजदेव का जीवन वृत्त, व्यक्तित्व एवं कृतित्व 4. आलम तथा द्विजदेव के काव्य के वर्ण्य विषय 5. आलम तथा द्विजदेव की काव्य-भाषा का स्वरूप शब्द-भण्डार और व्याकरण 6. आलम तथा द्विजदेव की काव्य-भाषा का सौष्ठव । उपसंहार । संदर्भ ग्रंन्थ सूची ।

184. राजेश कुमार
**नवगीत-आन्दोलन और वीरेन्द्र मिश्र ।**
निर्देशिका : डॉ. आशा जोशी
Th 14779

*सारांश*

वीरेन्द्र मिश्र ने प्रत्यक्ष या परोक्ष जगत के अभिज्ञान-इन्द्रिय-संबेद्य बिम्बों का प्रयोग किया है । इनके बिम्ब-विधान में युगानुरूप विकास दिखाई देता है । इनके गीतों में अधिकतर महानगरीय, आंचलिक, जीवनानुभूति, प्रतीकात्मक, राजनैतिक-सामाजिक और विज्ञान से जुड़े बिम्ब का विधान है । प्रतीक-विधान की दृष्टि से वीरेन्द्र मिश्र-ने समाज और प्रकृति के संवेदनशील संदर्भों को प्रतीक के रूप में ग्रहण किया है। उनके प्रतीक अधिकतर प्रकृतिपरक ही हैं । ध्वनि, संगीत और यथार्थ जगत से जुड़े हुए प्रतीकों का वीरेन्द्र मिश्र ने व्यापक प्रयोग किया है । अतः वीरेन्द्र मिश्र विषय और शिल्प की दृष्टि से नवगीत-आन्दोलन की प्रवृत्तियों के न केवल सहचारी हैं बल्कि उनको पुष्ट करने में भी इन्होंने योगदान दिया है । रचना, समीक्षा और संपादन के स्तर पर वे नवगीत के प्रति पूर्ण समर्पित थे । सत्ता और व्यावसायिकता के प्रचार-तन्त्र से दूर रहकर उन्होंने नवगीत की प्रतिष्ठा के लिए कठोर साधना की ।

*विषय सूची*

1. नवगीत : अवधारणा एवं स्वरूप 2. नवगीत का उद्‌भव, विकास एवं विशष्ट प्रदेय 3. वीरेन्द्र मिश्र : जीवन-परिचय, व्यक्तित्व एवं कृतित्व 4. नवगीत आन्दोलन और वीरेन्द्र मिश्र : रचना, आलोचना एवं संपादन के स्तर पर नवगीत से सम्बद्धता 5. वीरेन्द्र मिश्र के नवगीत काव्य का कथ्य-सापेक्ष अध्ययन । उपसंहार । ग्रंन्थ सूची ।

185. शर्मा (पूनम)
**यथार्थवादी रंगमंच और स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी नाटक ।**
निर्देशक : प्रो. रमेश गौतम
Th 14798

*सारांश*

स्वातन्त्रयोत्तर यथार्थवादी नाटककारों ने कल्पना के स्थान पर यथार्थ को प्रमुखता

देते हुए समाज की यथातथ्य परिस्थितियों से अवगत कराया जिसमें लक्ष्मीनारायण मिश्र, सुरेन्द्र वर्मा, मोहन रोकेश, प्रभाकर श्रोत्रिय, विष्णु प्रभाकर के यथार्थवादी नाटकों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही । इनके नाटकों की मंच पर प्रस्तुति दर्शक को एक नया विचार और सोचने पर मजबूर करती है, जो यथार्थवादी रंगमंच की सफलता का परिचायक है ।

*विषय सूची*

1. यथार्थवादी रंगमंच का स्वरूप ओर उसके प्रतिमान 2. यथार्थवादी रंगमंचीय परम्परा 3. स्वंतत्रता-पूर्व हिन्दी नाटक और यथार्थवादी रंगमंच 4. यथार्थवादी रंगमंच और स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी नाटका का वस्तु-विधान 5. यथार्थवादी रंगमंच और स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी नाटकों की चरित्र-सृष्टि 6. यथार्थवादी रंगमंच और स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी नाटकों का उद्देश्य 7. यथार्थवादी रंगमंच और स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी नाटकों का रंग-शिल्प । उपसंहार । ग्रंन्थ सूची ।

186. शर्मा (रजनी)
**रीतिकालीन संत-काव्य में जीवन-मूल्य ।**
निर्देशिका : डॉ. नीलम सक्सैना
Th 14786

*सारांश*

रीतिकालीन संत-काव्य में जीवन-मूल्य का सर्वांगीण विवेचन ही प्रस्तुत शोध-विषय का मुख्य लक्ष्य है । जीवन-मूल्य व्यक्ति और समाज के परिप्रेक्ष्य में ही निर्धारित किए जाते है । ये मूल्य व्यावहारिक एवं आदर्शात्मक दोनों ही स्तारों पर देखे जा सकते है । प्रत्येक समाज एवं संस्कृति में कुछ ऐसे मूल्य होते हैं जिन्हें तर्क और प्रमाण का आधार प्राप्त नहीं होता फिर भी वे समाज एवं संस्कृति की विशिष्टता को सूचित करते हैं । इनके पालन में ही समाज गर्व का अनुभव करता हैं । जीवन-मूल्यों को व्यावहरिक रूप देने में रीतिकालीन संतों के अपूर्व योगदान पर संक्षेप में प्रकाश डाला गया है, साथ ही महत्त्वपूर्ण स्थापनाओं को भी प्रस्तुत किया गया है।

*विषय सूची*

1. जीवन-मूल्यों की अवधारणा 2. हिन्दी संत-साहित्य की पृष्ठभूमि 3. रीतिकालीन संत कवि और उनका रचना संसार 4. रीतिकालीन संत-काव्य में सामाजिक

जीवन-मूल्य 5. रीतिकालीन संत-काव्य में धार्मिक जीवन-मूल्य 6. रीतिकालीन संत-काव्य में दार्शनिक जीवन-मूल्य 7. रीतिकालीन संत-काव्य में नैतिक जीवन-मूल्य । उपसंहार । ग्रंथानुक्रमणिका ।

187. शिवानी

**अज्ञेय का कथा साहित्य : व्यक्तित्व और व्यवस्था का संघर्ष ।**

निर्देशक : डॉ. कृष्णदत्त पालीवाल

Th 14780

*सारांश*

अज्ञेय के संपूर्ण कृतित्व, विशेषतः कथा-साहित्य में व्यक्तित्व बनाम व्यवस्था का संघर्ष दिख जाता है । बंधी लीकों के प्रति अस्वीकार का भाव उन्हें नयी राहों को तलाशने की क्षमता देता है । वे संघर्ष की दिशा को महत्त्वपूर्ण मानते हैं ताकि परिवर्तन के मानी बने रह सके । परंपरा, समाज, रचनाकर्म, मूल्यों, व्यक्तिगत संबंधों आदि के प्रति किए गए उनके समस्त प्रयोग वस्तुतः 'व्यक्तित्व' की स्थापना हेतु किए गए संघर्ष के विभिन्न पहलू हैं । 'शेखर' की द्विविधा की संघर्ष हैं, रेखा का प्रेम भी, योके की अनास्था भी और बीनू के प्रश्न भी - यह संघर्ष ही मुक्ति का एकान्त द्वार है ।

*विषय सूची*

1. व्यक्तित्व ओर व्यवस्था का संघर्ष 2. अज्ञेय : रचनाकार व्यक्तित्व 3. अज्ञेय के उपन्यासों की अंतर्वस्तु 4. कहानीकार अज्ञेय की रचनाभूमि 5. कथाकार अज्ञेय : संघर्ष के शिल्पगत संकेत । उपसंहार । ग्रंन्थ सूची ।

188. सिंह (अनिल कुमार)

**नागार्जुन के साहित्य में जनपदीय चेतना : महत्त्वपूर्ण काव्यों एवं उपन्यासों के संदर्भ में**

निर्देशक : डॉ. हरिमोहन शर्मा

Th 14781

*सारांश*

नागार्जुन की आंचलिकता पारिभाषिक रूप में आंचलिक न होकर स्थानायता से भरी है । इसे जनपदीय चेतना कहने में कोई हर्ज नहीं है । नागार्जुन के लिए जनपदीय

चेतना ही वह उत्स है, जिससे उनके रग-रग में देश प्रेम और मानव-प्रेम की धाराएँ प्रवाहित होती है । जैसे कालबद्ध होकर कालातीत हुआ जाता है, वैसे ही स्थानबद्ध होकर सार्वभौम भी हुआ जाता है । इसीलिए नागार्जुन की जनपदीय चेतना स्थानीयता को सार्वभौम से जोड़ती प्रतीत होती है ।

*विषय सूची*

1. जनपदीय चेतना : स्वरूप और विश्लेषण 2. नागार्जुन के काव्य में जनपद ओर उसका स्वरूप 3. नागार्जुन के कथा साहित्य में जनपदीय समाज और संस्कृति 4. नागार्जुन के साहित्य में जनपदीय चेतना का विस्तार एवं सीमाएँ 5. नागार्जुन के भाषा-शिल्प पर जनपद का प्रभाव । उपसंहार । ग्रंन्थ सूची ।

189. सिंह (आरती)
**समकालीन हिन्दी नाटकों की संरचना पर लोकनाट्य शैलियों का प्रभाव।**
निर्देशिका : डॉ. माधुरी सुबोध
Th 14775

*सारांश*

हिन्दी नाटकों में लोकनाट्यशैलियों के प्रयोग ने हिन्दी नाट्यसाहित्य को समृद्ध किया है । इस नवीन धारा से एक क्षेत्र के नाटककार को दूसरे क्षेत्र की सांस्कृतिक विरासत से परिचित करा, उस क्षेत्र के पाठकों व दर्शकों का परिचय भी उस लोकनाट्य से कराया है । कला का यह प्रसार भारत की एकता को तो अटूट करता ही है । साथ ही हमारे नाट्क साहित्य का जीवन से अटूट संबंध भी जोड़ता है। क्योंकि नाटक मात्र अभिव्यक्ति का एक माध्यम ही नहीं अपितु जीवन का जींवत रूप भी है । यही कारण है कि नाटक व रंगमंच को जीवन्त कला माना जाता है।

*विषय सूची*

1. लोकनाट्य का अर्थ एवं अवधारणा 2. लोकनाट्य शैलियों का स्वरूप : सामान्य विशिष्टताएं 3. हिन्दी नाटक : लोकनाट्शैलियों का प्रभाव 4. नवरंगांदोलन : लोकनाट्यशैलियों की अनिवार्यता एवं नई रंगचेतना का आरम्भ 5. प्रमुख समकालीन हिन्दी नाटकों का विशिष्ट अध्ययन 6. लोकनाट्य शैलियांः समकालीन हिन्दी नाटकों का संरचना : शिल्प । ग्रंन्थ सूची ।

190. सैनी (शिल्पा)
**समकालीन हिन्दी उपन्यासों में हाशिये के लोग ।**
निर्देशिका : डॉ. अर्चना वर्मा
Th 14792

*सारांश*

हाशिये की अवधारणा के समाजशास्त्रीय पहलू को समझाया गया है तथा उसके भारतीय दृष्टिकोण की भी व्याख्या की गई है । हिन्दी उपन्यासों में दलित वर्ग के चित्रण के माध्यम से उसकी हाशिये की स्थिति का वर्णन करते हुए हिन्दी उपन्यासों में चित्रित उसकी आत्म-चेतना के उदय और उसके स्वरूप का भी चित्रण किया है । लेखिकाओं द्वारा लिखी गई रचनाएँ तथा लेखकों द्वारा लिखी गई रचनाओं के अंतर को स्पष्ट करते हुए, लेखिकाओं द्वारा लिखे उपन्यासों में व्यक्त उसके अस्त्विबोध ओर आत्म-चेतना की विकास यात्रा का चित्रण किया गया है । आदिवासी व मुसलमान की हाशिये पर होने की विवशता का चित्रण किया गया है। सौंदर्यशास्त्र के जड़ीभूत प्रतिमानों से अलग हाशिये के साहित्य के सौंदर्यशास्त्र का स्वरूप स्पष्ट किया गया है ।

*विषय सूची*

1. हाशिये पर होने की अवधारणा 2. साहित्यिक सृष्टि में दलित जीवन की अभिव्यक्ति 3. साहित्यिक सृष्टि में स्त्री जीवन की अभिव्यक्ति 4. साहित्यिक सृष्टि में अल्पसंख्यकों (आदिवासी, मुसलमान) के जीवन की अभिव्यक्ति 5. हाशिये के साहित्य का सौंदर्यशास्त्र । उपसंहार । ग्रंन्थ सूची ।

191. हरदीप कौर
**ऐतिहासिक-सामाजिक संकट और भूषण का काव्य ।**
निर्देशक : डॉ. भूपेन्द्र सिंह
Th 14782

*सारांश*

भूषण ने अपने युग पर आये हुए सामाजिक संकटों को अभिव्यक्त करने की सामग्री युग के इतिहास से ली परन्तु उनके काव्य में इतिहास के लक्षण जैसे क्रमबद्धता, सुनिश्चित तिथि सम्वतों का उल्लेख आदि न होने के कारण ऐतिहासिक

संकट उत्पन्न हुआ । इतिहास उनके काव्य में कच्ची सामग्री के रूप में है क्योंकि लिखते समय कवि का दृष्टिकोण इतिहास लेखन का नहीं था, काव्य सृजन का था। उन्होने अपने काव्य में युग जीवन और तत्कालीन इतिहास से समर्थित अनेक व्यक्तियों, स्थलों, घटना, प्रसंगों और तथ्यों का वर्णन स्पष्टवादिता, निर्भीकता, साहस और पूरी ईमानदारी के साथ किया है । अतः उनका काव्य तथ्य और सत्य की रसात्मक अभिव्यक्ति है । भूषण ने इतिहास की टूटल हुई कड़ियों को तर्क बल से जोड़कर उसके छुटे हुए रिक्तांशों को भाव, विचार व कल्पना से जीवन्त और मांसल बनाकर नये इतिहास का निर्माण किया है । इस प्रकार उनका काव्य उनकी प्रतिभा का साक्षात् प्रमाण है ओर भूषण प्रतिभा-सम्पन्न, महत्त्वकांक्षी और सहज कवि है ।

*विषय सूची*

1. भूषण युगीन परिस्थितियाँ 2. भूषण का जीवन-वृत्त और व्यक्तित्व 3. भूषण का कृतित्व 4. भूषण के काव्य में ऐतिहासिकता ओर सामाजिकता 5. भूषण के काव्य में ऐतिहासिक संकट 6. भूषण के काव्य में सामाजिक संकट । उपसंहार । ग्रंन्थ सूची ।

## M.Phil Dissertations

192. अमित कुमार
**काला पादरी में धर्मान्तरण की राजनीति और आदिवासी समाज ।**
निर्देशक : डॉ. प्रेम सिंह

193. अहलावत (विदित)
**समकालीन कविता में आदिवासी स्वर (नगाड़े की तरह बजते हैं शब्द के संदर्भ में)**
निर्देशक : डॉ. मोहन

194. उप्पल (वनिता)
**मनोविश्लेषणवाद और इलाचन्द्रजोशी का संन्यासी ।**
निर्देशक : प्रो. गोपेश्वर सिंह

195. कृष्णपाल सिंह
**अक्षयवट में लोक-तत्त्व ।**
निर्देशक : डॉ सुरेन्द्रनाथ सिंह

196. कन्नौजिया (चन्द्रभूषण)
**कुरूक्षेत्र और अंधायुग में युद्ध और शांति के प्रश्न ।**
निर्देशक : डॉ. सुरेन्द्रनाथ सिंह

197. कविता
**जगद्विनोद में समाज और संस्कृति ।**
निर्देशक : डॉ. मुकेश गर्ग

198. गुप्ता (उमा)
**दुश्चक्र में स्रष्टा और भूमण्डलीकरण का संदर्भ ।**
निर्देशक : प्रो. सुधीश पचौरी

199. गुप्ता (नीतू)
**भूषण का अलंकार-निरूपण ।**
निर्देशक : डॉ. मुकेश गर्ग

200. चेतन
**कही ईसुरी फाग में परंपरा और आधुनिकता ।**
निर्देशक : डॉ. तेज सिंह

201. ठाकुर (प्रणव कुमार)
**हिन्दी कविता में साम्प्रदायिकता विरोधी स्वर (2002-2003 की कविताओं के संदर्भ में)**
निर्देशक : डॉ. अपूर्वानंद

202. धर्मेन्द्र सिंह
**इंडिया टुडे के वार्षिकांकों का हिन्दी साहित्य में योगदान ।**
निर्देशिका : डॉ. कुमुद शर्मा

203. नीता कुमारी
**कामायनी में मनु की संकल्पना (कामायनी : एक पुनर्विचार के संदर्भ में)**
निर्देशक : डॉ. कृष्णादत्त शर्मा

204. नीलम
**परिशिष्ट में उपेक्षित समाज और मुक्ति की कामना ।**
निर्देशक : डॉ. अपूर्वानंद

205. भारद्वाज (प्रवीन)
**प्रतापसिंह-विरूदावली में इतिहास और कल्पना ।**
निर्देशक : डॉ. मुकेश गर्ग

206. प्रवीण कुमार
**इतिहास और साहित्य की समानांतरता ।**
निर्देशक : प्रो. अजय तिवारी

207. पूनम
**कड़ियाँ (भीष्म साहनी) के पुरूष पात्र ।**
निर्देशक : डॉ. मोहनलाल कपूर

208. पूनम
**गृहशोभा (2004) के विज्ञापनों में उपभोक्ता संस्कृति ।**
निर्देशिका : डॉ. सुधा सिंह

209. पूनम कुमारी
**प्रभा खेतान का नारी चिन्तन (उपनिवेश में स्त्री के विशेष सन्दर्भ में)**
निर्देशिका : डॉ. सुधा सिंह

210. भास्कर कुमार
**भूमंडलीकरण और स्त्री ।**
निर्देशिका : डॉ. कुमुद शर्मा

211. मुकेश रानी
**रात का सफर में नारी चेतना ।**
निर्देशक : डॉ. सुरेन्द्र नाथ सिंह

212. रमन (नवीन कुमार)
**कलम ओर कुदाल के बहाने में स्त्रीवादी विमर्श ।**
निर्देशिका : डॉ. कुमुद शर्मा

213. रमन (यशपाल)
**दीवार में एक खिड़की रहती थी : उपभोक्तावादी संस्कृति के संदर्भ में।**
निर्देशक : डॉ. मोहन

214. राजकुमारी
**आज बाजार बंद है उपन्यास में वेश्यावृत्ति समस्या ।**
निर्देशक : डॉ. तेज सिंह

215. राजेश कुमार
**बसन्ती में विस्थापन की डिम्बना ।**
निर्देशक : प्रो. अजय तिवारी

216. रावत (अनुज कुमार)
**रक्तबीज में समाजबोध ।**
निर्देशक : डॉ. अपूर्वानंद

217. रेणू कुमारी
**मृणाल पाण्डे की कहानियों में स्त्री-विमर्श ।**
निर्देशक : प्रो. गोपेश्वर सिंह

218. लक्ष्मी देवी
**आवां : में स्त्रीवादी विमर्श ।**
निर्देशिका : डॉ. सुधा सिंह

219. विनीत कुमार
**एफ. एम. चैनलों में हिन्दी का बदलता रूप ।**
निर्देशक : प्रो. सुधीश पचौरी

220. वीरेन्द्र सिंह
**अरूण कमल की रचना-प्रक्रिया पुतली में संसार के सन्दर्भ में ।**
निर्देशक : प्रो. कृष्णदत्त पालीवाल

221. शर्मा (अनन्ता)
**काठ की घंटियाँ में राजनैतिक विसंगति और विडंबना ।**
निर्देशक : प्रो. कृष्णदत्त पालीवाल

222. शर्मा (ज्योति)
**प्रभाकर श्रोत्रिय के नाटकों में स्त्री-प्रश्न ।**
निर्देशक : प्रो. रमेश गौतम

223. शर्मा (पारूल)
**युग की गंगा में लोक-तत्त्व ।**
निर्देशक : प्रो. कृष्णदत्त शर्मा

224. शर्मा (पूनम)
**नागार्जुन की राजनीतिक दृष्टि : हजार-हजार बाँहों वाली के संदर्भ में।**
निर्देशक : डॉ. हरिमोहन शर्मा

225. सिंघल (श्वेता)
**राग दरबारी और महाभोज की राजनीतिक संवेदना : तुलनात्मक अध्ययन।**
निर्देशक : प्रो. कृष्णदत्त पालीवाल

226. सीमा
**तर्पण : सामाजिक तनाव का समकालीन आख्यान ।**
निर्देशक : डॉ. तेज सिंह

227. सुधांशु (अनिरूद्ध कुमार)
**आगरा बाज़ार में लोकधर्मिता ।**
निर्देशक : डॉ. मोहन

228. सुधांशु कुमार
**पीली आंधी में स्त्री जीवन का यथार्थ ।**
निर्देशक : प्रो. गोपेश्वर सिंह

229. सेठी (आरती)
**उसी जंगल समय में : यथार्थबोध ।**
निर्देशक : डॉ. प्रेम सिंह

230. हृदय कुमार
**कैसी आगी लगाई में यथार्थ-बोध ।**
निर्देशक : डॉ. हरिमोहन शर्मा

231. हर्षिता
**जनसत्ता के रविवारीय संपादकीय पृष्ठों में प्रकाशित सांस्कृतिक विमर्श ।**
निर्देशक : प्रो. सुधीश पचौरी